विजयमानसूरिकृत 'पट्टक'

– सं. मुनि महाबोधिविजय

भूमिका :

विक्रमना अढारमा सैकामां तैयार थयेल प्रस्तुत पट्टक तर्कसम्राट पू. पं. श्रीजयसुंदर वि. महाराजना संग्रहमांथी प्राप्त थयेल छे. आचार्यविजयमानसूरि महाराजनी आज्ञाथी श्रीलावण्यविजय गणिए आ पट्टक लख्यो छे. आनुं बीजुं नाम सामाचारी जल्प पट्टक छे. प्रतिने अंते 'ए अट्ठावीस' एम लखेलुं छे. गणना करता कुल २६ बोल थाय छे.

खास करीने गच्छमां वधी जती शिथिलताने निवारवा अथवा गच्छमां अनुशासनने वधु मजबूत बनाववा पट्टक तैयार करवामां आवे छे. विक्रमना तेरमा सैकाथी आवा पट्टको बनावाया होय तेवुं जणाय छे.

प्रस्तुत पट्टकना प्रत्येक बोलमां आगमो, पूर्वाचार्यो रचित प्रकरणो तेमज केटलाक पट्टकोनी साक्षी आपी छे. श्रुतव्यवहार अने जितव्यवहारने पण ठेर ठेर प्रधानता आपी छे.

अहीं साक्षी तरीके आपेला तमाम जल्पो प्राय: अप्रगट छे. जगद्गुरु श्री हीरविजयसूरि महाराजे द्वादशजल्पनी रचना करी छे – ते प्रसिद्ध छे – प्रगट छे. परंतु ते श्रीविजयदानसूरिकृत प्रसादीकृत ७ बोलना अर्थना विसंवाद टाळवा माटे रचायेल छे. अहीं जे क्रमांक १४ अने २०मां श्रीहीरविजयसूरिप्रसादित सामाचारी जल्पनो उल्लेख थयो छे ते द्वादशजल्पथी भिन्न समजवानो छे. अलबत्त, आ जल्प वर्तमानमां प्राप्त थयो नथी. परंतु तेवो एक जल्प रचायो छे ते नक्की छे. श्री विजयदेवसूरि महाराजे वि. सं. १६७२ वर्षे अषाढ सुद बीजना दिवसे पाटण नगरमां आदेश करेल पट्टकमांथी आ वात छती थाय छे.

''भट्टा. श्रीहीरविजयसूरीश्वरइ ए बार बोल प्रसाद कर्या तथा भट्टा. श्री विजयसेनसूरीश्वरइं प्रसाद कर्या जे सात बोल तथा भट्टारक **श्रीहीरविजयसूरि** तथा भट्टा. श्रीविजयसेनसूरीश्वरइं **बीजाइ जे बोल प्रसाद कर्या** ते तिमज कहवा पणि कोणइ विपरित न कहवा, जे विपरित कहस्यइ तेहनइ आकरो ठबको देवरास्यइ ।१।''

प्रस्तुत पट्टक जुनी गुजरातीमां छे. क्रमांक नवमां आपेलो वृद्धवाद खास ध्यान खेंचे तेवो छे. 'छ मास उपरांत आचार्य शून्य गच्छनी मर्यादा अप्रमाण था

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एहवो वृद्धवाद संभलाइ छे.'

आ सिवाय पण अन्य अनेक सामाचारीओनी वातो आ पट्टकमां छे जे ध्यानथी पठनीय छे. आचार्य विजयमानसूरिनी गुरुपरंपरा - शिष्यपरंपरानो उल्लेख मळतो नथी. तेथी ए अंगे विशेष प्रकाश पाडी शकायो नथी.

—x—x—

संवत् १७४४ वर्षे कार्त्तिक सुदि १० शुक्रे । भश्री**विजयमानसूरि** निर्देशात् । उ । श्री**लावण्यविजयगणिभिः** सामाचारीजल्पपट्टको लिख्यते ।

सुविहित समवाय योग्यं ॥ श्रुत जीत व्यवहारनें अनुसारिं तपागच्छनी सामाचारी सन्मार्ग छे । जे मार्टि **वशेषावश्यक पन्नवजी प्रश्नोत्तरसमुच्चयछत्रीसजल्पा**दिकनें अनुसारिं आज सुधी तपागछमाहि श्रुत-जीतव्यवहार विरुद्ध प्ररूपणा नथी प्रवर्त्ती । अनें कोइइं विरुद्ध प्ररूपणा करी विचारिं तेहनें ते समवायना आचार्योपाध्यायादिक वी(गी)तार्थ मिली सर्वसुविहित संमतिं उत्सूत्र प्ररूपणा दोष निवारिओ ते समंध प्रसिद्ध छें माटि तपागछ सुविहित सद्देहेवो ॥१ ॥

तथा **गछाचारवृत्ति निशीथचूर्णि कल्पभाष्या**दिकने अनुसारि जघन्यथी **निशीथ** पर्यन्त शास्त्रना कोविद थइ माया मृषावाद छाडी निःशल्यपणें प्रवचनमार्ग कहे ते माटि तपागच्छनी वर्तमान पदस्थ गीतार्थ पिण सुविहित सद्देहवो ॥२ ॥

तथा **कल्पभाष्य उत्तराध्ययन ठाणांग दशवैकालिक उपदेशमाला पंचाशकादिक**ने अनुसारि सुविहित पदस्थनी आज्ञा लोपी गच्छथी जुदा थइ स्वेच्छाइं टोली करी प्रवर्त्ते अने सुविहितगच्छनां गीतार्थ उपरि मत्सर राखे, लोक आगि छता अछता दोष देखाडें एहवा पूर्वोक्तश्रुतें रहित द्रव्यलिंगी ते मार्गानुसारी न कहिइ तो गीतार्थ किम सद्दहिइ ॥३ ॥

तथा **ठाणांग उत्तराध्ययना**दिकश्रुतव्यवहार श्री **आणंदविमलसूरि** प्रसादित **सामाचारी जल्पा**दिक जीतव्यवहारनें अनुसारिं सुविहितगच्छने सहवासे वर्त्तमानगच्छनायकनी आज्ञाइं योग वही - दिग्बंध प्रवर्त्तिते प्रमाण ॥४ ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तथा **निशीथ नंदिचूर्णि आवश्यकनिर्युक्ति** अनुसारि ऋद्धिगारवने ... तथाविध पदस्थगीतार्थनी आज्ञा लोपी पूर्वोक्तविधि विना योग वही सभा ...क्ष **आचारांगादिक** वांचे ते अरिहंतादिकनो, द्वादशांगीनो प्रत्यनीक यथाछंदो ...हिंइं जे माटि तीर्थंकर अदत्त गुरुअदत्तादिकनो दोष घणां संभवे छे ॥५ ॥

श्रुतव्यवहारइं पूर्वोक्त जीतव्यवहारइं वर्त्तमान गच्छनायकनी आज्ञा विना गीतार्थे पिण भव्यनें दीक्षा न देवी । कदाचित् गछाचार्य देशांतरइं होइ तो वेषपालटो करावी चार अ.नी तुलना कराववा पिण योगपूर्वक सिद्धान्त न भणाववो ॥६ ॥

तथा **आचारदिनकर प्रश्नोत्तरसमुच्चया**दिकनइं अनुसारि **हैमव्याकरण द्व्याश्रयादिक**साहित्य **उत्तराध्ययना**दि सिद्धान्त भणाववा असमर्थ एहवा पन्यास गणेश बे उपरांत शिष्य निश्राइं न राखइं आचार्य पिण अधिकनी आज्ञा नापें । तपागछमांहि आचार्यनी ज दीक्षा होइं अने सुविहित गछांतरें आचार्यादिक ५ माहि एक नी दीक्षा होइ । श्रुतव्यवहारिं तो गीतार्थने ज दीक्षानी अनुज्ञा छै ॥७ ॥

तथा **श्री सोमसुंदर** प्रसादित जल्पनें अनुसारि तथा **महानिशीथ आचारांगादि**कनें अनुसारि अगीतार्थसंयत विशेषगुणवंत गछने अयोगि शिथल सुविहितगछनी आज्ञादि स्वेछाइं प्रवर्त्ते ते सामाचारीना प्रत्यनीक जाणिवा ॥८ ॥

उपदेशमाला दशाश्रुतस्कंध निशीथभाष्य ज्ञातादिकनें अनुसारिं गुरुनी आज्ञाइं चोमासुं रहे विहारादिक करे अन्यथा सामाचारी माथा सूनी माटि गुरु अदत्तादिक दोष संभवे जे माटिं **व्यवहारभाष्या**दिकने अनुसारिं स्वे देशानुगत वाणिज्यादिक कर्म साक्षि राजानी परि पंचाचारनो साक्षि सदाचार्य छइं । अत **एव छ मास उपरांत आचार्य शून्य गछनी मर्यादा अप्रमाण थाय एहवो वृद्धवाद संभलाइ छे** ॥९ ॥

कल्पभाष्य दशवैकालिक भगवती पंचाशक गछाचारपइन्नादिकने अनुसारि स्वतः परतः शुद्ध प्ररूपक ते सद्गुरु जाणिवो ॥१० ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आवश्यकनिर्युक्तिनें अनुसारिं सुविहित वृद्ध गीतार्थने योगिं पाक्खी **चो**मासी संवत्सरीखामणां करवा ज। अन्यथा सामान्य शुद्धि न थाइं पडिकमणुं पिण अप्रमाण थाइं। जे माटि **व्यवहारसूत्रादिकनें** अनुसारि आचार्यादिकने अयोगि स्थापनाचार्य आगलि आलोचना प्रमाण होइ ॥११ ॥

अष्टकवृत्ति विशेषावश्यकभाष्यादिकने अनुसारिं वर्त्तमान पंचाचार्यमांहि थापनाचार्यनइ विषइं मुख्यवृत्ति गछाचार्यनी स्थापना संभविइ छइ पछे गीतार्थ कहे ते प्रमाण ॥१२ ॥

श्रीसोमसुंदरसूरि प्रसादित **सामाचारी कुलक**ने अनुसारि तपागछीय सुविहित साधुइ ४६ नियम गीतार्थ शाखि पडवजवा ॥१३ ॥

श्रुतव्यवहारइं जीतव्यवहारइं लिहा पासिं संयतें उत्सर्गथी पुस्तक लिखाववुं नहीं ! कारणें लिखावें तो **श्रीसोमसुंदरसूरि श्रीहीरविजय**प्रसादित जल्पनें अनुसारि ५०० अथवा १००० गाथा लगइं गुरु आदिक आज्ञाइं अन्यथा गुरुगच्छनिश्रित थाइं ते पुस्तक गुर्वादिकनी आज्ञा विना वांचवुं भणवुं न कल्पे ॥१४ ॥

श्रुत जीत ऽगीतार्थसंयत पुस्तक क्रय विक्रे न ल्यें कारणि लेवुं पडे तो गुरुनी आज्ञाइं गृहस्थ पासि लेवरावइ ॥१५ ॥

तथा श्रुतव्य. गुरुनी आज्ञा विना ऽगीतार्थ अपवाद सेवे नहीं ॥१७ ॥

जीतकल्पादिकनइं अनुसारि ऋण आपी विशुद्ध न थाइं तिहां सूधी देवाधि द्रव्य भक्षक साथि --- आहारादिक परिचय धर्मार्थी साधुइं श्रावकें न करवो। अनें ते दोषनी विपरीत [था]पना न करवी ॥१७ ॥

आवश्यकभाष्यादिकनें अनुसारि पोतानी टोलीना गृहस्थोने -- आवर्जवा निमित्ते पूर्वोक्त दोष सेवी जे गीतार्थ शाखि आलोयणा न ल्ये आप सुद्ध परुपक करी माने ते भूमीगत मिथ्यात्वी जाणिवा। तेहनुं उ ---दर्शन न करवुं ॥१८ ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उपदेशमाला सुगडांगवृत्ति छत्रीसजल्प तथा उ. **श्री यशोविजयग. प्रसादित श्रद्धानजल्पनें** अनुसारि मत्सरि सुविहितगछनी आज्ञा निरपक्ष्य थका सुद्ध सामाचारी विघयवी जे इहलोकानुरोधि अज्ञान कष्ट करी ते मायामृषावादी सद्देहवा ॥१९ ॥

तथा **श्रीहीर. प्रसादितसमाचारीजल्पानु**सारी नगरनी निश्राइं २ मासकल्प उपरांत गुरुनी आज्ञा विना रहेवुं न कल्पे ॥ **कल्पभाष्य श्रीजगच्चन्द्रसूरि** प्रसादित **सामाचारी जल्पा**नुसारि लोक आगलि सुविहितगछनां गुण ढांकी दोष प्रकासी लोकने व्युद्ग्रहसहित करी वंदनपूजनादिक व्यवहार टलावे ते शासनोच्छेदक सद्देहवा ॥२० ॥

निशीथचूर्ण्यादिकने अनुसारि अगीतार्थ साधु गुरुनी आज्ञा विना नित्य वखाण करे निःशूक थइ गृहस्थ आगि सिद्धांत वांचे ते संयम श्रेणि बाहय पासत्था जाणवा ॥२१ ॥

आवश्यकनिर्युक्ति दशवै. दशाश्रुतस्कंधा(दि)कने अनुसारि सांभोगिक पदस्थनें योगिं निमंत्रणा विना जे नित्यें आहारादिक करे तेहनां नोकारसी प्रमुख पच्चक्खाण तथा महाव्रत लोपाइ गुरु अदत्ताहारादिक माटि ॥२२ ॥

सामाचारी ग्रंथने अनुसारि गणेश साधुइं गुरुनी आज्ञा विना उपधान वहेरावे नहीं व्रतोच्चार करावे नहीं माल पहेरावें नहीं वांदणां देवरावे नहीं पोसह प्रमुख ना आदेश नापे। स्वेछाइ एतला वानां करावे ते गीतार्थनो प्रत्यनीक थाइ गुरुनीं भक्तिभंगाशाताना संभवे माटि बीजुं एह विधि पिण गीतार्थगम्य छे. **पंचाशक**ने अनुसारि एहवा माई मृषावादीनें साधु सुद्धपरुपक सद्दहीं विनयादिक करे तेहने पिण माठां फल संभवे ॥२३ ॥

पंचांगीने अनुसारिं खोटां आलंबन लेइ कदाग्रहथी सामाचारी विघटवे ते अवकर चंपकमाला सरिषा जाणिवा ॥ जिम समदृष्टिए बोल विचारी आराधक थाइ तिम आत्मा सुविहितें करवो ॥२४ ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तथा सुवि. गछनायकें गणबहिःकृत संयतना शिष्य नें पिण गछवासी पदस्थ उपस्थापनापूर्वक दिग्बंध आचार्यादिकनी संमति ज करे अन्यथा तो पूर्वोक्त ४ श्रुतजीतव्य. ने अनुसारि स्वपर गछनो दिग्बंध सर्वथा न घटइं छ इम गणबहिःकृतसंजतने गछवासी पदस्थ स्वनिश्राइं कहि छे तेहने गुरुकुलवास स्वप्नगत राज्यलाभवत् प्रमाण नहीं ॥२५ ॥

श्रु.जी. लोकरूढिं सुविहितगछव्यवहारि प्रवर्त्तता सगोत्रीय आचार्यनी शाखि विना आचार्यादिक पद प्रमाण नहीं ॥ २६ ॥

ए अठावीस ॥

★

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org